शिक्षक बनने की प्रक्रिया में शिक्षण अभ्यास की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। यही वह अवसर होता है जब छात्र-अध्यापक का सामना वास्तविक स्कूल से होता है। उसे सिद्धांत रूप में अर्जित शैक्षिक ज्ञान को परखने का अवसर मिलता है। इस लिहाज से किसी भी सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए उपयुक्त स्कूल, शिक्षण अभ्यास के लिए पर्याप्त समय, उचित परिस्थितियां और सही निरीक्षणकर्ताओं का मिलना आवश्यक होता है। वास्तविकता यह है कि शिक्षण अभ्यास की इस गतिविधि के लिए ज्यादातर शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को प्रशासन और स्कूलों का सहयोग नहीं मिल पाता। यह लेख अध्यापक बनने की प्रक्रिया में शिक्षण अभ्यास की वास्तविकताओं से परिचित कराता है। साथ ही यहां बी.एड. कॉलेजों और शिक्षक प्रशिक्षण कोर्सों की अन्य व्यवस्थागत एवं व्यावहारिक खामियों और परेशानियों की ओर भी ध्यान दिलाया गया है।

नीरज प्रिया

स्कूल एवं विश्वविद्यालय स्तर पर 20 वर्षों तक अध्यापन कराती रही हैं। वर्तमान में गुरू राम दास कॉलेज ऑफ एज्युकेशन, दिल्ली में प्राचार्य के पद पर कार्यरत हैं।

पढ़ाना सीखने के लिए स्कूल चाहिए

स्कूलों में शिक्षक छात्रों को कैसे पढ़ाएं, इसका प्रशिक्षण देने के लिए देश भर में अलग-अलग स्तर के लिए अनेक सेवा पूर्व शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स चलाए जा रहे हैं। शिक्षक प्रशिक्षण से जुड़े इन कोर्सों के दो पक्ष होते हैं-पहला सैद्धांतिक, जिसमें छात्र-अध्यापक शिक्षा से संबंधित सिद्धान्त पढ़ता है तथा दूसरा व्यावहारिक, जिसमें छात्र-अध्यापक को स्कूलों में जाकर वास्तविक परिस्थितियों में शिक्षण अभ्यास करने का मौका दिया जाता है। यह पक्ष हरेक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा होता है। इसे इन कोर्सों की आत्मा भी कहा जाए तो गलत नहीं होगा क्योंकि यही वह अवसर होता है जब छात्र-अध्यापक को एक शिक्षक बनने अथवा होने का सही मायने में अहसास होना शुरू होता है। वह संस्थान में जो कुछ सिद्धान्त के तौर पर पढ़ रहा होता है उसे प्रत्यक्ष रूप में करने की एक कार्यशाला या लैब होता है स्कूल, जहां वह उन सिद्धान्तों का व्यवहार में परीक्षण करके देखता है जो उसे संस्थान में पढ़ाए जा रहे होते हैं। शिक्षण के विभिन्न पक्ष यथा- अपने विषय का उपयुक्त ज्ञान; विभिन्न शिक्षण विधियों को इस्तेमाल करने में विशेषज्ञता;

कक्षा प्रबंधन में कुशलता; स्कूलों में अकादमिक के अतिरिक्त अन्य गैर-अकादमिक गतिविधियां कौन-कौन सी हैं, जिनमें शिक्षकों को व्यस्त रहना पड़ता है, आदि के बारे में उसे सही मायने में तभी पता चलता है जब वह स्वयं स्कूलों में जाकर एक वास्तविक शिक्षक की भूमिका निभाता है। परन्तु यह दुर्भाग्य की बात है कि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का यही पक्ष सबसे कमजोर व दयनीय हालत में है। शिक्षक शिक्षा के निजीकरण से परिस्थिति और भी बिगड़ी है।

स्कूल की उपलब्धता

कहां पढ़ाएं : सबसे पहली दिक्कत शिक्षण अभ्यास के लिए उचित संख्या में स्कूल उपलब्ध न होने से आती है। यूं तो राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (एन.सी.टी.ई.) के अनुसार प्रत्येक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान के पास उचित संख्या में व उचित दूरी पर मान्यता प्राप्त सैकेंडरी स्कूल होने चाहिएं (बी.एड़. कोर्स के लिए) जहां जाकर छात्र-अध्यापक अपना फील्ड वर्क व शिक्षण से संबंधित कार्य अर्थात् शिक्षण अभ्यास कर सकें। परन्तु एन.सी.टी.ई. ने स्वयं इसके लिए परेशानी खड़ी कर दी है। पिछले कुछ सालों में जिस तरह से व जितनी संख्या में एन.सी.टी.ई. ने निजी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को मान्यता दी है उससे शिक्षण अभ्यास के लिए स्कूल मिलने में दिक्कतें पैदा हो गई हैं। एक अध्यापक संस्थान में कम से कम सौ छात्र-अध्यापक होते हैं। दिल्ली राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों जैसे- उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, आदि में तो छात्र-अध्यापक की संख्या दो सौ या तीन सौ तक भी है। एन.सी.टी.ई. के अपने मानकों के अनुसार 1000 छात्रों वाले स्कूल में अधिकतम 10 छात्र-अध्यापक ही एक समय में शिक्षण अभ्यास कर सकते हैं। परन्तु ऐसा हो पाना कैसे मुमकिन है जबकि उपलब्ध स्कूलों की संख्या छात्र-अध्यापक की तुलना में काफी कम है। इसके अतिरिक्त कई और कोर्स भी हैं जैसे बी.एल.एड़., ई.टी.ई., डी.एल.एड़., आदि जहां शिक्षण अभ्यास के लिए स्कूलों की आवश्यकता होती है। ऐसे में इन संस्थानों को अपने छात्रों के लिए स्कूल मिलने में खासी परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है।

निजी संस्थानों को सरकारी व निजी, दोनों ही स्कूल खुशी से अपने यहां शिक्षण अभ्यास की इजाजत नहीं देते। सरकारी स्कूलों के प्रिंसिपल अपने आप शिक्षण अभ्यास की स्वीकृति नहीं दे सकते। इसके लिए वे निदेशालय व जोन के आदेशों व नियमों से बंधे होते हैं। कुछ सरकारी स्कूल प्रिंसिपल तो निदेशालय के निर्देशों के बावजूद इन छात्रों को लेने में खासी अनिच्छा जाहिर करते हैं व बड़े बेमन से निदेशालय के दबाव में ही उन्हें शिक्षण अभ्यास की इजाजत देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अक्सर मजबूरी में व कई बार अंग्रेजी माध्यम के छात्रों की जरूरत का ख्याल रखते हुए इन संस्थानों को अन्य छात्रों के लिए पब्लिक/प्राइवेट स्कूल ढूढ़ने पड़ते हैं जो कि आसान काम नहीं है। साथ ही हिन्दी माध्यम के छात्रों को इससे काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है क्योंकि वे अंग्रेजी माध्यम में पढ़ा पाने में सक्षम नहीं होते। अतः न तो वे अपने साथ इंसाफ कर पाते हैं न ही छात्रों के साथ। कहीं कहीं इसका उलट भी होता है। जैसे उत्तर प्रदेश में ज्यादातर छात्र (अंग्रेजी माध्यम वाले भी) हिन्दी माध्यम के स्कूलों में ही शिक्षण अभ्यास करते हैं।

निजी स्कूलों को लेकर एक परेशानी यह भी आती है कि प्रत्येक इलाके में उचित संख्या में अच्छे निजी स्कूल उपलब्ध ही नहीं हैं। जो हैं वहां भी कई प्रकार की दिक्कतें आती हैं। जैसे, कई स्कूल अपने छात्रों की पढ़ाई बर्बाद होने के डर से (क्योंकि प्रशिक्षु अध्यापक अभी नौसिखिए ही होते हैं जिनसे वे अपने छात्रों के 20 शिक्षण दिवस खराब नहीं करवाना चाहते।

साथ ही उन पर अभिभावकों का दबाव भी होता है), कुछ स्कूल बाहरी व्यक्ति से स्कूल का अनुशासन भंग होने, इस दौरान अपने शिक्षकों के खाली होकर गप्पबाजी में लगने अथवा गुटबाजी करने तथा स्कूल के भेद खुलने के डर से भी अपने स्कूलों में शिक्षण अभ्यास की अनुमति देने से मना कर देते हैं। कुछ स्कूल 5-10 दिन से ज्यादा या 2-4 छात्रों से ज्यादा को अनुमति देने को तैयार नहीं होते। पुरुष छात्र-अध्यापकों को लेकर भी खासी दिक्कतें आती हैं क्योंकि बहुत से स्कूल उन्हें लेने को तैयार नहीं होते।

कुछ पब्लिक स्कूल बिना पैसे के शिक्षण अभ्यास के लिए इजाजत देने को तैयार नहीं होते। दो साल पहले मुझे इस तरह के कई अनुभव हुए। कुछ स्कूलों ने एक छात्र के लिए 1000 रुपए तो कुछ ने 500 रुपए की मांग की। हां, जान-पहचान हो तो कभी-कभी 250 रुपए प्रति छात्र में या मुफ्त में भी बात बन जाती है। परन्तु ऐसे स्कूल कम ही होते हैं जो बिना किसी लालच अथवा जान-पहचान के शिक्षण अभ्यास की अनुमति दे देते हैं।

स्कूल का संसार

इन परिस्थितियों में कैसे पढ़ाएं, स्कूल मिलने के बाद ही सारी समस्याएं खत्म नहीं हो जातीं। अब दूसरी तरह की परेशानियां झेलनी पड़ती हैं जिसे छात्र-अध्यापक ज्यादा झेलते हैं। जिस उत्साह के साथ वे शिक्षक बनने आते हैं वह स्कूलों की हालत देखकर पहली नजर में ही ठंडा पड़ने लगता है। फिर भी वे शुक्र मनाते हैं कि चलो स्कूल तो मिला।

पहली परेशानी स्कूलों के ढांचों (आधारभूत संरचना/भौतिक वातावरण) को लेकर आती है। ज्यादातर सरकारी स्कूलों में, विशेषकर उनकी जो सामाजिक व आर्थिक रूप से पिछड़े इलाकों में स्थित हैं, हालत कारुणिक है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में कहा गया है कि शिक्षक और विद्यार्थी औसतन प्रतिदिन 6 घंटे और एक वर्ष में 1000 घंटे विद्यालय में बिताते हैं। अतः वह भौतिक संदर्भ जिसमें वे काम करते हैं वह समान, आरामदेह एवं सुखद होना चाहिए। इसके लिए विद्यालयों में न्यूनतम सुविधाएं हों जिसमें मेज-कुर्सी, मूल सुविधाएं जैसे शौचालय व पीने का पानी, इत्यादि आते हैं (पृ. 92)। पर यह देखने में आया है कि देश की राजधानी दिल्ली में भी अनेक सरकारी स्कूलों की हालत खराब है। उनके पास अभी तक एक अच्छा व पक्का भवन नहीं है। भवन है भी तो उसकी हालत ऐसी है जैसे दिल्ली की कच्ची बस्ती का कोई बदरंग मकान या टूटा-फूटा झौंपड़ा, जिसमें पढ़ाई-लिखाई का कोई माहौल नजर नहीं आता। कमरों में न रोशनी है न पंखे और न ही बैठने के लिए कुर्सी-मेज। यहां तक कि टाट-पट्टी भी काफी छात्रों को नसीब नहीं है।

सफाई तो लगता है इन स्कूलों में महीनों तक होती नहीं (यद्यपि ठेके पर सफाई कर्मचारी लगे हुए हैं)। लगता है कि नहा-धोकर, साफ-सुथरे कपड़े पहनकर आए बच्चे स्कूलों में केवल धूल-मिट्टी लपेटने के लिए ही आते हैं। छात्र तो दूर शिक्षकों तक को शौचालय उपलब्ध नहीं है और जो हैं भी वे इतने गंदे होते हैं कि दूर से ही बदबू के मारे बुरा हाल हो जाता है। ऊपर से संक्रमण होने का डर। कक्षाओं के नाम पर हाल यह है कि कुछ कक्षाएं तो हैं ही नहीं। वे बरामदों में या फिर खुले में लगती हैं जहां शोर व अन्य व्यवधान के अलावा कुछ नहीं होता। अतः छात्र-अध्यापक जब ऐसे स्कूलों में जाते हैं तो उन्हें अत्यधिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। स्कूल का अनाकर्षक वातावरण उनकी सारी ऊर्जा व उत्साह को एक झटके में ही समाप्त कर देता है। ऐसे स्कूलों में वे अपना प्रशिक्षण कार्य ढंग से नहीं कर पाते और सिद्धान्त में पढ़ी-पढ़ाई ज्यादातर बातें काफूर हो जाती हैं।

गली-मौहल्लों में खुले निजी स्कूलों की हालत भी ज्यादा अच्छी नहीं है। हां, साफ-सफाई, पानी की व्यवस्था व शौचालयों के मामले में वे सरकारी स्कूलों से थोड़े बेहतर होते हैं। पर संरचनात्मक ढांचे के संदर्भ में उनकी स्थिति कहीं-कहीं सरकारी स्कूलों से भी दयनीय है। यह देखने में आया है कि दसवीं कक्षा तक मान्यता प्राप्त कई निजी स्कूलों में तो खेल का मैदान व पुस्तकालय जैसी मूल सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं। चूंकि ऐसे ज्यादातर स्कूल रिहाइशी कॉलोनियों में मकानों को रूपांतरित करके खोले गए होते हैं अथवा बिना योजना के, बगैर नक्शा पास करवाए ही बना दिए गए होते हैं, अतः यहां कुछ भी नियत स्थान पर नहीं होता। ऐसे में छात्रों व शिक्षकों को खासी परेशानी होती है।

स्कूल के कीमती 20 दिनों की एवज में स्कूल प्रिंसिपल व शिक्षक छात्र-अध्यापकों से कुछ अपेक्षाएं करने लगते हैं। कुछ प्रिंसिपल चाहते हैं कि ये छात्र-अध्यापक खाली समय में उन शिक्षकों की कक्षाएं भी लें जो उस दिन छुट्टी पर हों। साथ ही शैक्षिक से इतर कामों में भी उनके शिक्षकों का हाथ बटाएं। दूसरी तरफ ज्यादातर शिक्षक चाहते हैं कि ये छात्र-अध्यापक कक्षा में उन्हीं की तरह पढ़ाएं ताकि छात्रों को उनकी आदत बनी रहे। ऐसा न होने पर वे उन पर तरह-तरह के दबाव बनाते हैं तथा परेशान करते हैं। वे यह भी चाहते हैं कि ये उनका सिलेबस या कोर्स पूरा करवाएं। कुछ शिक्षक चाहते हैं कि वे उनके सारे पीरियड ले लें। दोनों ही तरह से छात्र-अध्यापकों को परेशानी का सामना करना पड़ता है। पहला, छात्र-अध्यापक को पाठ योजना के अनुसार पढ़ाना होता है जिसके लिए कई तरह की तैयारियां करनी पड़ती हैं। अतः उनके पास इतना समय नहीं होता कि शिक्षण से इतर कामों को अधिक समय दे सकें। दूसरा, उन्हें उस तरह से पढ़ाना होता है जैसा उनके संस्थान में उन्हें बताया गया था तथा जिसके आधार पर उनका मूल्यांकन होना है। अतः वे चाहकर भी सिलेबस पूरा नहीं करवा पाते तथा स्कूलों की नाराजगी सहते हैं।

मूल्यांकन कैसे हो

निरीक्षक की काबिलियत व काम के प्रति समर्पण शिक्षण अभ्यास का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष होता है। निरीक्षक को छात्र-अध्यापक का कक्षा शिक्षण के दौरान अवलोकन करके मूल्यांकन करना होता है। परन्तु यहां भी कई तरह की परेशानियां हैं।

यद्यपि इस संबंध में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् मौन है कि एक निरीक्षक एक दिन में कितने छात्र-अध्यापकों का निरीक्षण करे, फिर भी इसके लिए प्रत्येक संस्थान अपने-अपने स्तर पर तैयारियां करते हैं। व्यावहारिक तौर पर 8 से लेकर 10 छात्र अध्यापकों पर कम से कम एक निरीक्षक होता है जबकि 20 के लिए दो या तीन निरीक्षक हो सकते हैं। परन्तु इतने निरीक्षक मिलना भी आसान नहीं होता। विशेषकर निजी संस्थानों में इसे लेकर ज्यादा दिक्कतें आती हैं जिसके अनेक कारण हैं।

निजी संस्थानों के लिए राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् द्वारा तय मानकों के अनुसार बी.एड़. कोर्स में 100 छात्रों पर 7 शिक्षक एजुकेटर रखने का प्रावधान है। अतः ऐसे कॉलेजों में अधिकतम 7 शिक्षक एजुकेटर होते हैं। कहीं-कहीं तो यह संख्या 4 या 5 ही होती है। बाकी को प्रति व्याख्यान आधार पर (गेस्ट लेक्चरर) नियुक्त करके काम चलाया जाता है। ऐसे में कई बार एक निरीक्षक को एक स्कूल में 15-15 छात्र-अध्यापकों का एक ही दिन में निरीक्षण करना होता है। उसे एक ही पीरियड में 3 से 4 या अधिक छात्रों को अवलोकित करना होता है। अतः कई बार निरीक्षक चाहकर भी छात्रों के साथ इंसाफ नहीं कर पाते। ऐसे में अक्सर निरीक्षक द्वारा अवलोकन की खानापूर्ति की जाती है। कुछ संस्थानों में शिक्षक की

योग्यता/गुणवत्ता से ज्यादा यह देखा जाता है कि वह कितनी कम तनख्वाह पर काम कर सकता है। अतः कई शिक्षक नौसिखिए की श्रेणी में आते हैं जिनका अपना ज्ञान ही अधूरा है। ऐसे में वे छात्रों को क्या व कैसी प्रतिक्रिया देते होंगे, कहना न होगा।

कभी-कभी आलस के कारण या देरी से पहुंचने के कारण भी शिक्षक सही तरीके से छात्र-अध्यापकों का अवलोकन नहीं कर पाते। ऐसा भी देखने में आया है कि कुछ निरीक्षक एक विषय की कक्षा में अवलोकन करते हुए ही दोनों विषयों के संबंध में लिखित प्रतिक्रिया व सुझाव दे देते हैं। इसके पक्ष में वह तर्क देते हैं कि विधियां तो सभी विषयों में एक-सी ही होती हैं, जबकि ऐसा है नहीं। विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गणित व भाषा के विषयों के शिक्षण में कई अंतर होते हैं। अतः एक विषय के आधार पर दोनों विषयों के संबंध में प्रतिक्रिया देना उचित नहीं लगता।

मूल्यांकन पद्धति

शिक्षण अभ्यास के दौरान किए गए शिक्षण के आधार पर किया जाने वाला छात्र-अध्यापक का मूल्यांकन भी शिक्षक शिक्षा के इस पक्ष को कमजोर करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि मूल्याकंन करते समय छात्रों के बीच व्यक्तिगत भिन्नता, किसी विषय में उनकी रुचि व योग्यता व उन स्कूलों की परिस्थिति जिनमें छात्र-अध्यापक ने शिक्षण अभ्यास किया था, का ध्यान नहीं रखा जाता। अनेक बार ऐसा होता है कि एक छात्र-अध्यापक का ज्ञान व उसकी रुचि एक विषय में ज्यादा होती है जिससे उस विषय में उसका शिक्षण भी प्रभावित होता है जबकि दूसरे विषय में वह उतना प्रभावशाली शिक्षण नहीं कर पाता। शिक्षण अभ्यास के लिए मिले स्कूल की परिस्थिति भी छात्र-अध्यापकों के शिक्षण पर प्रभाव डालती है। अनुकूल वातावरण में छात्र-अध्यापक बेहतर कर पाते हैं जबकि विपरीत परिस्थिति में उनका शिक्षण प्रभावी नहीं रह पाता।

उपरोक्त वर्णित कारणों के अलावा कुछ ऐसे कारण हैं जिन पर किसी का वश नहीं होता। सरकारी स्कूलों में बंटने वाले मध्याह्न भोजन के कारण उन छात्र-अध्यापकों को खासी परेशानी होती है जिनके पीरियड तीसरे-चौथे होते हैं या फिर भोजन अवकाश काल के बाद पांचवां पीरियड होता है, उन्हें ज्यादा परेशानी उठानी पड़ती है। इस दौरान मध्याह्न भोजन या तो बंट रहा होता है या फिर छात्र उसे खाने में व्यस्त होते हैं। एक अन्य कारण स्कूलों में बंटने वाली छात्रवृत्ति होती है। जिस दिन छात्रवृत्ति बंटती है उस दिन स्कूल में और कोई काम नहीं हो पाता। परन्तु मूल्यांकन के वक्त इन बातों को महत्त्व नहीं दिया जाता जिससे अच्छे छात्र प्रभावित होते हैं।

इसके अतिरिक्त देश के अलग-अलग विश्वविद्यालयों में मूल्यांकन के अलग-अलग तरीके हैं। कुछ विश्वविद्यालयों में यह पूर्णतया आंतरिक होता है तो ज्यादातर में आंतरिक व बाह्य परीक्षक का चलन है। इसमे भी आंतरिक मूल्यांकन को केवल 40 प्रतिशत महत्त्व दिया जाता है जबकि बाह्य परीक्षक के हाथ में 60 प्रतिशत अंक होते हैं। यह देखने में आया है कि बाह्य परीक्षक अक्सर छात्रों को 5 मिनट के अवलोकन के आधार पर ही 95 प्रतिशत तक अंक दे देते हैं तथा शिक्षण अभ्यास का मखौल उड़ाते हैं। ऐसा वे इसलिए करते हैं ताकि संबंधित संस्थान उन्हें बार-बार बुलाए क्योंकि कई संस्थान ऐसा करने पर उनसे खुश रहते हैं। यह भी सुनने में आया है कि कुछ राज्यों में इस अवसर पर छात्र-अध्यापकों से पांच हजार रुपये तक लिए जाते हैं। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि उन्हें अधिक से अधिक अंक दिलवाए जा सकें। इसके लिए तीन प्रकार से सौदा किया जाता है। जो परीक्षक अड़ियल किस्म के होते हैं

तथा छात्र-अध्यापकों के उस दिन के प्रदर्शन के आधार पर ही अंक देना चाहते हैं उन्हें विश्वविद्यालय द्वारा तय राशि ही दी जाती है। जो परीक्षक प्रत्येक छात्र-अध्यापक को अस्सी प्रतिशत तक अंक देने को राजी हो जाते हैं उन्हें तय राशि के अतिरिक्त एक दिन के पचास हजार रुपये तक दिए जाते हैं। जो परीक्षक कॉलेजों के ऊपर ही सब कुछ छोड़ देते हैं उन्हें इससे भी अधिक राशि दी जाती है। देश में कुछ राज्यों में तो हालत यह भी हो गई है कि वहां घर बैठे ही डिग्रियां बेची जा रही हैं। इसमें छात्र-अध्यापक नियमित बी.एड. घर बैठे कर लेते हैं और शिक्षण अभ्यास भी। बस उसके लिए कुछ अतिरिक्त दाम चुकाने पड़ते हैं।

कुल मिलाकर शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम के इस पक्ष का बुरा हाल है। पहली समस्या यह है कि जो कुछ सिद्धान्त में पढ़ाया जाता है उसमें से ज्यादातर का असल शिक्षण से दूर का भी नाता नहीं होता और होता भी है तो उस पर अमल नहीं होता। दूसरे, सरकार व स्वंय राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् शिक्षक शिक्षा को सुधारने के प्रति उतने इच्छुक व चौंक्कने नहीं हैं जितना उन्हें होना चाहिए था। यही कारण है कि आज शिक्षक शिक्षा संस्थान पैसा कमाने का अच्छा जरिया बन चुके हैं।

अतः जरूरत है कि इस ओर समय रहते ध्यान दिया जाए। इसके लिए कुछ आवश्यक कदम उठाए जा सकते हैं जैसे- स्कूलों की समस्या को दूर करने के लिए नए संस्थान खोलने पर अंकुश लगाया जाए, पहले सैद्धान्तिक हिस्से की पढ़ाई करवाई जाए बाद में शिक्षण अभ्यास करवाया जाए। अन्य उपाय भी सोचे जा सकते हैं। जैसे शिक्षण अभ्यास के लिए ज्यादा से ज्यादा अभिमुखीकरण कार्यक्रम आयोजित किए जाएं, उचित संख्या में स्कूल व निरीक्षकों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए, आदि। इसके लिए निजी संस्थानों को वित्तीय सहायता दी जा सकती है। ◆

संदर्भ

1. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, दिल्ली, पृ. 92 राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् : वेबसाइट www.ncte-india.org, norms and standards, dated 19-09-2011
2. 2007 तक उत्तर प्रदेश में 773, हरियाणा में 386, राजस्थान में 304, पंजाब में 197, हिमाचल प्रदेश में 54, उत्तराखंड में 45 व दिल्ली में 40 प्राइवेट बी.एड़. संस्थानों को एन.सी.टी.ई. से मान्यता दी गई है। स्रोत- एन.सी.टी.ई. वेबसाइट
3. राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में सन 2011 में बनाई नीति के अनुसार डायरेक्टरेट ऑफ एजुकेशन ने प्राइवेट संस्थानों को केवल पांच स्कूल ही आवंटित किए जिनमें अधिकतम छह छात्र शिक्षक ही एक समय में शिक्षण अभ्यास कर सकते थे अर्थात् केवल 30 छात्रों की जरूरत ही पूरी हो सकती थी।
4. एन.सी.टी.ई. के अनुसार कम से कम 20 दिन शिक्षण अभ्यास होना चाहिए।
5. दिल्ली में सरकारी स्कूलों के छात्रों ने उच्च न्यायालय को पत्र लिखा कि वह डायरेक्टरेट ऑफ एजुकेशन, दिल्ली को उन्हें डेस्क उपलब्ध करवाने का निर्देश जारी करे। स्रोत- टाइम्स ऑफ इंडिया, 23 दिसंबर 2011।